International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030, Impact Factor: RJIF 5.24
www.advancedjournal.com
Volume 1; Issue 2; February 2016; Page No. 80-81

औपनिवेशिक सरकार की पर्यावरण नीति

Tulsi Chouhan
Assistant Professor, Department of History, Vivekananda College, Delhi University, Delhi, India

प्रस्तावना

भारतीय उपमहाद्वीप के विभिन्न हिस्सों को जीतकर उन स्थानों पर शासन चलाने के लिए नियम कायदों के निर्माण जरूरत पड़ी तो अंग्रेजी हुकूमत ने मात्र अपने ही हितों को तरजीह दी। फिर चाहे औपनिवेशिक व्यापार नीति हो या कृषि नीति हो या शासन व्यवस्था में फेरबदल की बात हो। उनका मात्र एक ही उद्देश्य था स्वयं का अधिक लाभ और अंग्रेजों की वन नीति में भी हमें यही दृष्टिकोण नजर आता है। भारतीय रियासतों या राज्य जैसे ही अंग्रेजों के अधीन आए वहां के प्राकृतिक संसाधन भी अंग्रेजों के अधीन आ गए और इन प्राकृतिक संसाधनों का दोहन अंग्रेजी हुकूमत ने अपने संकीर्ण आर्थिक हितों को पूरा करने के लिए खुलकर शोषण किया।

हमें इस बात का ध्यान रखना होगा कि औपनिवेशिक सरकार ने अपनी नीतियों का निर्माण तत्कालीन आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए किया न कि वनों के संवर्द्धन के लिए और न ही पर्यावरण के विकास के लिए।

औपनिवेशिक वन नीति को आकार देने वाला सर्व प्रमुख कारण था–ब्रिटेन में बलूत के वृक्ष का गायब होना। ब्रिटेन में ओद्योगिक क्रांति के पश्चात वहां पोत निर्माण, लोहा गलाने और अन्य उद्योगों से उठने वाली मांग और विनर्माण उद्योगों में लकड़ी की वाणिज्यिक मांग निरन्तर बढ रही थी। इसके परिणाम स्वरूप ब्रिटेन में बलूत के वृक्ष खत्म होने लगे लेकिन पूंजीपतियों के लाभ कमाने की लालसा कम नहीं हुई। ब्रिटेने की बलूत की लकड़ी के स्थान पर भारतीय सागौन की लकड़ी का प्रयोग किया गया क्योंकि जाहाज के निर्माण के लिए यह उपयुक्त लकड़ी थी। और इसी के चलते पश्चिमी तटीय वनों को निमूल कर दिया गया। सूरत और मालावार तट पर पोत निर्माण के कार्य ने भी इस प्रक्रिया को बल दिया और इस क्षेत्र के वन दोहन में तेजी आई।

औपनिवेशिक राज्य की भू–राजस्व नितियों का यदि हम अवलोकन करें तो इस बात के अनेक प्रमाण मौजूद है कि उन्होंने कभी भी कृषि व कृषक के विकास की बात नहीं की उन्होंने हमेशा राजस्व को बढ़ाने की ही मांग की है। और इसी लालसा के तहत अंग्रेजों ने कृषि क्षेत्र का अधिक से अधिक क्षेत्र का विस्तार किया। और गंगा यमुना के दो आब के वनों को साफ करके कृर्षि कार्यों को बढ़ाया अर्थात भारत के विभिन्न क्षेत्रों में भी इसे अंजाम दिया गया। आदिवासियों को भी, जो कि भारत के लगभग सभी हिस्सों में रहते थे, को भी स्थाई कृषि को अपनाने के लिए दबाब डाला गया और उन्हें वनों के उत्पाद से भी वंचित किया गया।

वनों के शोषण को रेलवे के निर्माण में भी गति दी 1850 के पश्चात रेलवे का निर्माण भारत में प्रारंभ हो गया। रानी गंज कोयले की खानों के प्रचलन से पूर्व तक रेलवे में ईधन के रूप में कोयले के स्थान पर लकड़ी का प्रयोग किया जाता था। इसके अतिरिक्त उस समय रेलवे के पट्टरीयों के बीच में कॉनक्रिट के स्लिपर के स्थान पर लकड़ी के स्लिपर का ही प्रयोग किया जाता था। एक सामान्य वृक्ष से तीन से चार स्लिपर निकलते थे। इस बात का अनुमान लगाना कठिन नहीं है कि रेलवे का विस्तार 1860 में 1349 किलोमीटर से बढ़कर 1910 में 51658 किलो मीटर हो गया तो कितने सागौन, साल और देवदार के वनों को निर्मूल कर दिया गया और आगे चलकर कुमायूं और गढ़वाल के उपहिमालयीय क्षेत्र के देवदार वनों का भी उपयोग किया गया।

उक्त लिखित तत्वों से आकार ग्रहण करती हुई औपनिवेशिक वन नीति के तहत 1847 में बॉम्बे फॉरेस्ट डिपाटमेंट की स्थापना की गई और इससे झूम खेतिहारों और ग्रामीण वन प्रयोक्ताओं को वनोत्पाद के प्रयोग को प्रतिबंधित कर दिया। 1865 का वन अधिनियम उन वनों पर राज्य के नियंत्रण को सुगम बनाने के लिए पारित किया गया जिनकी रेलवे को आवश्यकता थी। 1868 में मध्य प्रांत में सागवान, साल और शीशम को भी संरक्षित प्रजाति घोषित कर दिया गया। उक्त नियमों से ग्रामीण और आदिवासियों को कितनी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। इस बात का अनुमान हम इससे लगा सकते हैं कि इनकी मांग राष्ट्रीय आंदोलन में हर बार प्रमुखता से उठाई गई।

अंत में केवल यही कहा जा सकता है कि वाणिज्यिक उद्देश्यों प्रेरित वन नीति व कानून से वनों को नुकसान ही हुआ इसके अतिरिक्त जैवविविधता को कितनी हानि हुई इसका हमारे पास कोई ठोस आंकड़ा नहीं है और इस दिशा में और भी शोध करने की आवश्यकता है।

References

1. Madhav Gadgil and Ramchandra Guha, this fisured land : an ecological history of Inida, Delhi 1992
2. Richard H Grove, green imperialism: golonical expansion, tropical iland edens and the origins of environmentalism, 1600-1800, Delhi, 1996
3. Ajai Skaria, hybrid histories: forest, frantier and wildnees , Delhi 1988.